राख से ऊपर उठते : भारत के लिए ब्लैक कार्बन के अवसर
Rising From the Ashes: India's Black Carbon Opportunity

जेरेमी कार्ल
Jeremy Carl
7.20.09

जलवायु परिवर्तन के एक नए प्रमुख कारण की खोज से भारत को एक ऐसा स्वर्णिम अवसर मिल सकता है कि वह अंतर्राष्ट्रीय जलवायु समुदाय से जुड़ सकता है जिसके कारण भारत के व्यापक अंतर्राष्ट्रीय हितों को चुनौती मिलने के बजाय उनका विस्तार हो सकता है.

ब्लैक कार्बन, जिसे आम बोलचाल में "सूट कहा जाता है, को बहुत समय से जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण माना जाता रहा है, लेकिन वैश्विक चेतावनी के रूप में इसके महत्व को अब तक कम करके आँका गया था. यद्यपि इसकी सही संख्याओं को जानने के लिए अभी कुछ और अनुसंधान करना होगा, लेकिन वैज्ञानिक अब यह ज़रूर मानने लगे हैं कि जलवायु परिवर्तन के एक प्रमुख कारक के रूप में ब्लैक कार्बन कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) का पहला नहीं, बल्कि दूसरा प्रमुख कारण है. वैश्विक ऊष्मा (ग्लोबल वार्मिंग) के अब तक जितने अंश को जाना और समझा गया है उसका यह मात्र एक बटा पाँचवाँ भाग ही है. CO_2 से ऊष्मा का जो भाग निकलता है वह मात्र इसका आधा भाग ही है और इसी पर अनगिनत करार किए जाते हैं और उन पर चर्चा होती है, जबकि अब तक ब्लैक कार्बन पर अपेक्षाकृत कम ही ध्यान दिया गया है. इतना ही नहीं, ब्लैक कार्बन वातावरण में कुछ सप्ताहों तक ही रहता है, जबकि CO_2 कई दशकों तक वातावरण में फैला रहता है और यदि इसे नियंत्रित कर लिया जाए तो निकट भविष्य में ही वैश्विक ऊष्मा (ग्लोबल वार्मिंग) को बहुत तेज़ी से कम किया जा सकता है.

इस क्षेत्र में भारत के लिए अपार संभावनाएँ और अवसर हैं. चीन और भारत ब्लैक कार्बन के उत्सर्जन में दुनिया में सबसे अधिक अग्रणी हैं. इन दोनों देशों का कुल उत्सर्जन अमरीका के उत्सर्जन से कहीं अधिक है. यद्यपि इस उभरते हुए क्षेत्र में अध्ययन के आधार पर विश्वसनीय आँकड़े बहुत कम हैं, लेकिन हो सकता है कि ब्लैक कार्बन के ज़रिए भारत का उत्सर्जन CO_2 के उत्सर्जन के लिए जलवायु परिवर्तन के उसके योगदान की तुलना में कहीं अधिक हो. ब्लैक कार्बन के मसले पर कार्रवाई करते हुए भारतीय नीति-निर्माताओं को एक स्वर्णिम अवसर मिलेगा. इसलिए जलवायु परिवर्तन के लिए मात्र भाषणबाजी ही नहीं बल्कि उन्हें ठोस कार्रवाई करनी होगी. इससे अन्य क्षेत्रों में भी भारत के विकास संबंधी हितों का संवर्धन होगा. इसका कारण यह है कि स्थानीय रूप में वायु प्रदूषण का प्रमुख कारण - विशेष तौर पर घरों के अंदर - ब्लैक कार्बन ही है और इसी के कारण हर साल हज़ारों भारतीयों की अकाल मृत्यु हो जाती है. ब्लैक कार्बन के ये अवसर CO_2 के विनियम के लिए भारत के संबंधों के विरोधी हैं, क्योंकि CO_2 के उत्सर्जन को कम करने के लिए यदि ठोस उपाय किए भी जाते हैं तो वे भारत के विकास संबंधी अन्य अनेक लक्ष्यों को प्राप्त करने में बाधक सिद्ध होंगे.

भारत की जलवायु–समस्या पर बहुत कुछ लिखा भी गया है. यद्यपि भारतीय नेता भाषणों में तो यह स्वीकार करते हैं कि जलवायु परिवर्तन एक गंभीर खतरा है और यह एक वैश्विक समस्या भी है. भारत के लिए तो विशेष रूप से स्वीकार करते हैं कि गर्मी बढ़ने और जलवायु की परिवर्तनीयता के कारण गरीबों पर इसका

बहुत बुरा असर भी पड़ता है. लेकिन भारतीय अधिकारी इस बात को मानने के लिए राज़ी नहीं हैं कि भारत के CO_2 उत्सर्जन पर कोई कानूनी प्रतिबंध लगाया जाए. उनका तर्क यह है कि चूँकि विकसित देशों ने इस समस्या को पैदा किया है, इसलिए उसके समाधान के लिए भी उन्हें ही आगे आना होगा. पिछले वर्ष भारत की जलवायु योजना की घोषणा करते हुए मनमोहन सिंह ने कहा था, 'इस ग्रह के प्रत्येक नागरिक को ग्रह के वायुमंडलीय आकाश का समान अंश पाने का अधिकार होना चाहिए.....प्रति व्यक्ति उत्सर्जन का दीर्घकालीन संयोजन ही किसी भी जलवायु परिवर्तन संबंधी वैश्विक नीति का आधार होना चाहिए.' यह दृष्टिकोण शब्द-संयोजन की दृष्टि से कितना ही उपयोगी क्यों न लगता हो, भारत की प्रति-व्यक्ति ऊर्जा सबंधी खपत (और उत्सर्जन) को देखते हुए यह लगभग निरर्थक ही है. इससे यह सुनिश्चित होता है कि निर्बाध गति से भी किसी समय यह सुदूर भविष्य में भी पश्चिम की प्रति-व्यक्ति ऊर्जा सबंधी खपत (और उत्सर्जन) के स्तर पर नहीं पहुँच सकता.

CO_2 गतिरोध के विपरीत ब्लैक कार्बन का यह मसला अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के लिए अत्यंत उपयोगी अवसर प्रदान करता है, क्योंकि भारत ब्लैक कार्बन के उत्सर्जन को घटाकर अपने नागरिकों का स्वास्थ्य भी सुधार सकता है. ब्लैक कार्बन का निर्माण जीवाश्म ईंधन और जैव भार के अधूरे दहन के कारण होता है.भारत में इसका आशय है कोयला जलाना (बहुत ही गंदे और अनगढ़ तरीके से कोयला जलाया जाता है), डीज़ल इंजन, वन-काटना और सबसे अधिक ज़रूरी है, खास तौर पर ग्रामीण इलाकों में खाना पकाने के लिए घटिया किस्म का स्टोव जलाना. अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ब्लैक कार्बन से निज़ात पाने के किए इस समय कोई भी उपाय नहीं है. लेकिन भारत इस समस्या से निज़ात पाने के लिए कुछ ठोस कदम तो उठा ही सकता है ताकि विश्व समुदाय को लगे कि भारत सिर्फ़ भाषणबाजी करने के बजाय जलवायु परिवर्तन के मसले पर गंभीर है.

इस मसले को सुलझाने के लिए भारत के लिए कुछ प्रोत्साहन भी हैं. यह माना जाता है कि ब्लैक कार्बन के कारण भारत की बृहत् स्थानीय वार्मिंग भी काफ़ी प्रभावित हो सकती है. यदि यह हिमालय की हिमनदियों पर गिरती है तो अधिक से अधिक धूप और गर्मी को सोखने लगेगी. चीन के बाद भारत ही दूसरा देश है जो ब्लैक कार्बन का सबसे बड़ा प्रदूषक है. ये दोनों देश मिलकर ब्लैक कार्बन के वैश्विक उत्सर्जन का एक चौथाई या एक तिहाई के बीच के भाग के बराबर उत्सर्जन करते हैं.

नवीनतम उपग्रहों के प्रेक्षण के आधार पर किए गए अध्ययन से पता चला है कि भारत में गंगा का मैदानी इलाका स्थानीकृत ब्लैक कार्बन की अधिकतम वार्मिंग का "सबसे बड़ा ठिकाना है. भारत में खेती के लिए हिमनदियों से निकलने वाली नदियों का बहुत महत्व है. अधिकांश भारतीयों को आज भी इन्हींसे रोज़गार मिलता है. इसलिए इन हिमनदियों को अधिक से अधिक पिघलने से रोकना ही भारतीय हितों के संरक्षण के लिए हमारा पहला दायित्व होना चाहिए.

विश्व के दूसरे भागों में वन काटने, ईंधन के रूप में डीज़ल का उपयोग करने और कोयला जलाने से ब्लैक कार्बन का सबसे अधिक उत्पादन होता है. वर्तमान अनुमानों के अनुसार दक्षिण एशिया में ब्लैक कार्बन का अधिकांश उत्पादन परंपरागत ईंधन से ही होता है, जिनमें प्रमुख हैं, लकड़ी और अन्य पेड़-पौधे. और खाना पकाने का काम भी घटिया किस्म के चूल्हों पर ही किया जाता है. वास्तव में *नेचर जियोसाइन्स* में प्रकाशित हाल ही में किए गए अध्ययन के अनुसार यदि ब्लैक कार्बन का उत्पादन करने वाले परंपरागत स्टोवों को

हटाकर उनके स्थान पर प्राकृतिक गैस, सौर-ऊर्जा या किसी ब्लैक कार्बन का उत्पादन न करने वाले किसी अन्य स्टोव का उपयोग किया जाए तो दक्षिण एशिया से 70 से 80 प्रतिशत तक ब्लैक कार्बन का उत्सर्जन कम किया जा सकता है. निश्चय ही इससे जलवायु परिवर्तन में कम समय में ही कमी लाने में उल्लेखनीय प्रभाव पड़ेगा.

भारत कुछ पूरक उपायों के रूप में अन्य क्षेत्रों में भी ब्लैक कार्बन के उत्सर्जन को कम कर सकता है.सबसे पहले तो डीज़ल इंजन पर निर्भरता को कम करना होगा, खास तौर पर डीज़ल पावर से चलने वाले जनरेटरों का प्रयोग कम करना होगा. हालांकि भारत के अविश्वसनीय बिजली के ग्रिड को देखते हुए यह बहुत कठिन होगा. दूसरा उपाय यह है कि हमें वन भूमि के संरक्षण के महत्व पर ज़ोर देना होगा. खास तौर पर छत्तीसगढ़ जैसे राज्यों में, जहाँ संसाधनों के दोहन के कारण वन भूमि पर खतरा मंडराने लगा है.

तीसरा उपाय यह है कि ब्लैक कार्बन के उत्सर्जन को कम करने के नाम पर कोयला-चालित पावर सेक्टर और प्रदूषण नियंत्रण की क्षमता में सुधार लाया जाए. ब्लैक कार्बन के उत्सर्जन पर कम नियंत्रण रखने वाले गंदे, अकुशल और पुराने कोयला-चालित पावर संयंत्रों की तुलना में नए पावर संयंत्र भारत के कोयला-संसाधनों का अधिक कुशलता से उपयोग करते हैं.

लेकिन भारत के लिए ब्लैक कार्बन में कमी लाने के अवसर खाना पकाने के स्टोव में ही निहित हैं. निश्चय ही यह समस्या घरों के अंदर की है और खाना पकाने के स्टोव को बदलने के लिए भारत सरकार और अनेक ऐसे निजी संगठन सामने आए हैं जो आगे बढ़कर पिछले कई दशकों से ग्रामीण भारत में सुधरी किस्म के स्टोव लाने का प्रयास कर रहे हैं. लेकिन आम तौर पर तो हमें यह मानना ही होगा कि कई कारणों से ये प्रयास असफल ही रहे हैं. पहला कारण तो यह है कि इन ग्रामीण लोगों के पास इतने पैसे भी नहीं होते कि वे स्टोव टूटने पर उसमें अतिरिक्त पुर्जे डलवा सकें और न ही उनके पास इतनी दक्षता होती है कि वे उसकी मरम्मत कर सकें. दूसरा कारण यह है कि परंपरागत चूल्हों के प्रयोग से खाने में एक खास तरह की महक आती है और कई महिलाएँ उनके स्थान पर नया स्टोव सैद्धांतिक रूप में अधिक बेहतर होने पर भी लेने के लिए तैयार नहीं होतीं. तीसरा कारण यह है कि गैर-परंपरागत ऊर्जा मंत्रालय द्वारा किए गए काम को यदि अपवाद मान लिया जाए तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि खाना पकाने के स्टोव के निर्माण का कार्यक्रम बहुत छोटे स्तर पर ही चलाया गया. यदि ब्लैक कार्बन में कमी लाने के कार्यक्रम को सार्थक बनाना है (या बड़े पैमाने पर स्थानीय लोगों के स्वास्थ्य में सुधार लाना है) तो खाना पकाने के लाखों टन के स्टोवों का निर्माण करना होगा, उन्हें लोगों तक पहुँचाना होगा और उनका उपयोग कराना होगा. यह काम बड़े पैमाने पर करना होगा, इसके लिए अधिक संसाधनों की आवश्यकता होगी और इसके लिए उच्च स्तर पर भारत सरकार को सक्रिय भाग भी लेना होगा. अच्छा तो यही होगा कि इसे सरकारी-निजी सहभागिता के आधार पर संपन्न किया जाए.

गैर-परंपरागत ऊर्जा मंत्रालय के स्रोतों ने 1980 के दशक के मध्य से तीन करोड़ से अधिक खाना पकाने के स्टोवों की व्यवस्था की थी, लेकिन कई कारणों से डिज़ाइन या गुणवत्ता की कमी के कारण कुछ लाख स्टोव ही इस समय काम के लायक बाकी बचे हैं. सुधरी किस्म के स्टोवों के वितरण के लिए अधिक गंभीर प्रयास करने होंगे, बेहतर मैटीरियल इस्तेमाल करना होगा और उस पर अधिक लागत भी आएगी ताकि वे ज़्यादा समय तक चल सकें. पाँच करोड़ स्टोवों के वितरण के लिए जो भी लागत आएगी, वह भारत में CO_2 में कमी लाने के बृहत्तर लक्ष्य की प्राप्ति की तुलना में बहुत मामूली होगी. इस प्रकार अंततः यह प्रयास अधिक सार्थक

ही माना जाएगा. इसे कामयाब बनाने के लिए स्थानीय स्वास्थ्य के मद्देनज़र व्यापक शिक्षा का जन अभियान भी चलाना होगा. साथ ही यह भी ध्यान रखना होगा कि जो भी स्टोव तैयार किए जाएँ, वे उन समुदायों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप हों.

भले ही यह काम कठिन हो, लेकिन इसे प्रोत्साहित करने और सार्थक बनाने के लिए भारत सरकार के पास अनेक कारण हैं. सबसे पहला और ठोस कारण तो यही है कि भारत सरकार पर जलवायु परिवर्तन के लिए कुछ न कुछ करने का भारी अंतर्राष्ट्रीय दबाव है. कार्बन के संबंध में सार्थक प्रतिबद्धता के लिए भारत और चीन द्वारा इंकार कर देने से राष्ट्रपति ओबामा के लिए अमरीका में जलवायु योजना को बेच पाना बहुत कठिन होने लगा है. इसी प्रकार योरोप में आर्थिक संकट के कारण उनके नेताओं के लिए भी एक मँहगी जलवायु योजना को भारत के सार्थक सहयोग के बिना बेच पाने की संभावना भी क्षीण होने लगी है. ब्लैक कार्बन भारत को जलवायु परिवर्तन की समस्या से निज़ात पाने का एक अवसर प्रदान कर रहा है और इसके कारण अमरीका और योरोप भी कई महत्वपूर्ण क्षेत्रों में बलिदान करने के लिए तैयार हो जाएँगे.

भारत के लिए परंपरागत ऊर्जा के क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन के लिए सार्थक रियायतें न दे पाने के अनेक कारण हैं. सबसे पहला कारण तो यही है कि इसके तीव्र आर्थिक विकास और प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत को देखते हुए भारतीय नेता कुछ भी ऐसा करने से कतरा रहे हैं जिससे ऐसा लगे कि वे भारत के आर्थिक विकास पर अंकुश लगाने का प्रयास कर रहे हैं. इसके अलावा कोयला-चालित पावर सेक्टर भारत के ब्लैक कार्बन के उत्सर्जन का सबसे बड़ा स्रोत है और इसे कार्बन विनियम से प्रभावी रूप में प्रतिबंधित नहीं किया जा सकता. ऐसी कोई विश्वसनीय प्रौद्योगिकी भी नहीं है जिससे भारत के वर्तमान कोयला-चालित पावर उद्योगों के उत्सर्जन को काफ़ी हद तक कम किया जा सके और चीन और अमरीका में विकसित की जा रही कार्बन के अभिग्रहण की प्रौद्योगिकी को भी भारतीय वातावरण के अनुकूल बनाने के लिए भारी संशोधनों की आवश्यकता होगी. भारतीय कोयले की मूलभूत संरचना में भारी मात्रा में राख होने का मतलब यह है कि चीन और अमरीका के □साफ़-सुथरे□ पावर संयंत्र बहुत कम राख वाले कोयले के लिए डिज़ाइन किए गए हैं. भारत में ये प्रभावी नहीं होंगे.

ऑटोमोटिव के क्षेत्र में भी CO_2 के उत्सर्जन में भारी वृद्धि की संभावना है. भारतीय उपभोक्ता अपने बजट में आने वाले छोटे और कम ईंधन की खपत वाले वाहनों को तरजीह देते हैं. ऑटोमोटिव के क्षेत्र में बिक्री की कम दरों और अधिकांश भारतीय वाहनों में बढ़िया माइलेज को देखते हुए इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुधार लाने का कोई भी प्रस्तावित करार न तो राजनैतिक दृष्टि से और न ही तकनीकी दृष्टि से व्यावहारिक होगा. इसलिए भारत के ऑटोमोटिव के क्षेत्र में यदि कुछ करना भी है तो ऐसे □साफ़-सुथरे□ डीज़ल इंजनों की मांग अधिक व्यावहारिक होगी, जिनमें ब्लैक कार्बन का उत्सर्जन कम होता हो.

भारत की कठिन स्थिति को पूरी तरह समझते हुए जलवायु परिवर्तन पर भारत के प्रमुख वार्ताकार और वरिष्ठ भारतीय राजनयज्ञ श्याम सरण भारत द्वारा अपने उत्सर्जन में सार्थक कमी लाने में कोई प्रतिबद्धता नहीं दिखाए जाने पर पश्चिमी देशों द्वारा भारतीय माल पर शुल्क लगाने का विरोध करते हुए 'हरे संरक्षणवाद' का ही ढोल पीटते चले जा रहे हैं. इस बात की पूरी संभावना है कि जलवायु परिवर्तन संबंधी भावी वार्ताओं में ब्लैक कार्बन का मसला एक महत्वपूर्ण मुद्दे के रूप में छाया रहेगा और भारत को जलवायु पर अपनी प्रस्तुति

के स्वरूप और भाव दोनों में ही परिवर्तन करना होगा. इसके विकल्प उसके लिए सुखद न भी हों तो भी भारत को इस अवसर का उपयोग करने में हिचकिचाना नहीं चाहिए.

जेरेमी कार्ल स्टेनफ़ोर्ड विश्वविद्यालय में ऊर्जा व चिरस्थायी विकास कार्यक्रम में अनुसंधान फ़ैलो हैं. उनका अनुसंधान भारतीय ऊर्जा क्षेत्र पर केंद्रित है.